Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

भारतीय राजनीति और क्षेत्रीयतावाद

अमित कुमार रंजन[9]

विविधता में एकता भारत के सामाजिक और राजनीतिक जीवन की एक महत्वपूर्ण विशेषता हैं। भारत के स्वाधीनता संग्राम की सबसे बड़ी विशेषता थी भारत की एकता आजादी के संघर्ष में उत्तर और दक्षिण, पूरब और पश्चिम सभी क्षेत्रां के लोगों ने समानरूप से अपनी आहुति दी। भाषा रहन–सहन तथा सांस्कृतिक विविधता के बावजूद सम्पूर्ण भारत एक विशाल चट्टान की तरह स्वाधीनता संग्राम में खड़ा रहा और अपनी आजादी के लिए संघर्ष करता रहा। यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने भाषा एवं क्षेत्र के आधार पर लोगों को विभाजित करने का प्रयास किया था। लेकिन इस कार्य में सफल नहीं रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ वर्षों के बाद तक भारत की एकता और अखण्डता की अवधारण बनी रही। पिछले तीन दशको में भारत में क्षेत्रीयतावाद का रूप इतना व्यापक और भयावह हो गया कि भारत की संघीय व्यवस्था के लिए खतरा बनता जा रहा है।

क्षेत्रीयतावाद का अर्थ

इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज के अनुसार क्षेत्र भूतल का वह समरूपीय भाग है जो अपनी भौतिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर पड़ोसी भू–भाग से पृथक होता है। राष्ट्रीय भू–भाग के रूप में एक क्षेत्र में अपनी प्रथाओं एवं आदर्शों के प्रति चेतना पायी जाती है जो एक क्षेत्र के सदस्यों को राष्ट्र के दूसरे भू–भागों से पृथक पहचान प्रदान करता है। भारत में क्षेत्रीयतावाद का अर्थ सामान्य अर्थ से भिन्न है। भारत को व्यावहारिक दृष्टि से एक महादेश कहा जा सकता है यहाँ विभिन्न धर्मो, जातियों, विभिन्न भाषाओं तथा विभिन्न सम्प्रदायों के लोग रहते है। भारतीय संदर्भ में क्षेत्रीयतावाद का अर्थ सम्पूर्ण शब्द की तुलना में किसी विशेष राज्य या किसी विशेष क्षेत्र के प्रति वहाँ के लोगों में विशेष लगाव तथा उस राज्य या क्षेत्र के हितों के लिए राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से संगठित होना तथा उनके संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए संगठित प्रयास करना। उदाहरण के लिए पंजाब में, महाराष्ट्र में, असम में, तमिलनाडु में वहाँ के लोगों के द्वारा समय–समय पर जिस राजनीतिक भावना को व्यक्त किया गया है, उससे क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा मिला है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि क्षेत्रीयतावाद एक संकीर्ण एवं संकुचित भावना है जो राष्ट्रीयता का विलोम है

[9] शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

और जिसका एकमात्र उदेश्य है क्षेत्र के हितों की प्रधानता, भले ही उससे राष्ट्रीय हित क्यों न कमजोर हो जाए।
क्षेत्रीयतावाद के तीन आधारभूत विशेषताएँ हैं–

1. एक वैचारिकी के रूप में क्षेत्रीयतावाद सम्पूर्ण राष्ट्र को अपने फैलाव में शामिल नहीं करती।
2. क्षेत्रीयतावाद सम्पूर्ण का एक भाग है।
3. क्षेत्रीयतावाद एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है जिसे लघु अवधि में घटाया या बढ़ाया नहीं जा सकता। **इसे इचाशेक** (1970) ने क्षेत्रीय 'अस्मिता' कहा है।

क्षेत्रीयतावाद के स्वरूप (Form of Regionalism)

क्षेत्रीयवाद एक भावना है जो विभिन्न रूपों में समय–समय पर व्यक्त होता रहता है। अभी तक भारत में क्षेत्रीयतावाद की अभिव्यक्ति के निम्नलिखित रूप देखे गए हैं–

1. पृथक राज्य की मांग: भारत में क्षेत्रीयतावाद का सर्वाधिक आक्रामक रूप पृथक राज्य की मांग में अभिव्यक्त हुआ हैं 1956 में राज्य पुनर्गठन के बाद पृथक राज्य की मांग में काफी बढ़ोत्तरी हुई है। अधिक पिछड़ेपन और जाति, भाषा, धर्म को लेकर विभिन्न क्षेत्रों द्वारा पृथक राज्य की मांग समय–समय पर उठाई गई तथा क्षेत्रीय आन्दोलनों की शुरूआत की गई। अनेक राज्यों के निर्माण के बाद सन् 2000 में उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़ और झारखण्ड का निर्माण किया गया। वर्तमान में तेलंगाना क्षेत्र को पृथक राज्य बनाने और उत्तर प्रदेश का विभाजन कर तीन पृथक राज्य बनाने के लिए मांग की जा रही है।

2. संघ से पृथक होने की मांग: क्षेत्रीयतावाद का स्वरूप सिर्फ पृथक राज्य की मांग तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि पृथक देश की मांग इस आधार पर होने लगी। क्षेत्रीयतावाद के आन्दोलन को प्रबल बनाने में तमिलनाडु के द्रविड़, मुनेत्र कड़गम दल ने 1950 में मद्रास राज्य में पृथकतावादी आन्दोलन संगठित किया और मद्रास, आन्ध्र प्रदेश, केरल और मैसूर राज्यों को भारतीय संघ से अलग करके एक पृथक सम्प्रभु 'द्रविड़–स्थान' 'राज्य' बनाये जाने की मांग की। मास्टर तारासिंह के नेतृत्व में पंजाब के सिख सम्प्रदाय ने स्वाधीनता से पूर्व खालिस्तान की मांग की थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी पृथक सिख राज्य की मांग की गई। सन् 1950 से 1969 के बीच सिखों ने हिंसात्मक आन्दोलनों के माध्यम से पृथक पंजाबी सूबे की मांग की। 1980 में पुनः सिख चरमपथियों द्वारा खालिस्तान की मांग की गई। सिख चरम–पथियों द्वारा आनन्दपुर साहिब में आयोजित सम्मेलन में पृथक सिख राज्य की मांग की गई। 1986 में पश्चिम बंगाल के पहाड़ी क्षेत्र में लोगों ने स्वतंत्र गोरखालैण्ड की मांग की। उसी तरह 'मिजो राष्ट्रीय फ्रण्ट' के द्वारा स्वाधीन मिजोरम की मांग उठने लगी। कहने का तात्पर्य यह है कि क्षेत्रीयतावाद की राजनीति ने अलगाववादी राजनीति को बढ़ावा दिया। इस तरह की राजनीति देश की एकता एवं सम्प्रभुता के लिए गम्भीर चुनौती है।

3. अन्तर्राज्यीय विवाद और क्षेत्रीयतावादः संघात्मक शासन के अन्तर्गत संघ और इकाइयों के बीच तथा विभिन्न इकाईयों के बीच मतभेद या वैधानिक संघर्ष होने की सम्भावना तो रहती ही है। किन्तु जब इस प्रकार के संघर्ष या विवादों का आधार क्षेत्रीयतावाद हो जाता है तो यह संघर्ष या विवाद देश के संघीय स्वरूप के लिए खतरा बन जाता है। भारत में मुख्यरूप से अन्तर्राज्यीय विवाद के विषय नदियों के जल का बंटवारा, क्षेत्रों पर दावा विद्युत वितरण की समस्या इत्यादि है। मध्य–प्रदेश, गुजरात और राजस्थान के बीच नर्मदा नदी के जल के वितरण का विवाद, भांखड़ा नांगल बांध में उत्पन्न बिजली के वितरण का विवाद, तमिलनाडु, और कर्नाटक के बीच कावेरी नदी के जल के वितरण का विवाद अन्तर्राष्ट्रीय विवाद के मुख्य उदाहरण है।

4. स्वायत्तता की मांगः भारतीय संविधान द्वारा संघ और इकाइयों के बीच अधिकार क्षेत्र बंटे हुए है फिर भी दोनों के बीच टकराव होता रहता है। जब से केन्द्र तथा राज्यों में अन्य विभिन्न दलों की सरकार बनने लगी तब से राज्यों द्वारा स्वायत्तता की मांग उठने लगी। क्षेत्रीयता के आधार पर राज्य स्वायत्तता की मांग करने लगे। इस प्रकार की मांग कश्मीर, अरूणांचलप्रदेश, असम, नागालैण्ड इत्यादि राज्यों द्वारा होने लगी। केन्द्र–राज्य के बीच टकराव का होना संघीय व्यवस्था में स्वाभाविक है। परन्तु भारत में केन्द्र राज्य टकराव ने क्षेत्रीयतावाद का रूप धारण कर लिया है।

5. उत्तर–दक्षिण का विभाजनः भारत के राजनीति संस्कृति के अन्तर्गत दो उप–संस्कृतियाँ पनप रही है। वे हैं उत्तर भारत की संस्कृति और दक्षिण भारत की संस्कृति। दक्षिण भारत में यह आम धारणा है कि उत्तर भारत के लोग दक्षिण भारत के हितों की उपेक्षा करते हैं तथा उन पर अपनी संस्कृति थोपना चाहते हैं। अभी हाल ही में महाराष्ट्र नव–निर्माण सेना के अध्यक्ष राज ठाकरे द्वारा उत्तर–भारतीयों पर विशेषकर बिहारी एवं उत्तर प्रदेश के लोगों के संदर्भ में जो प्रतिक्रिया व्यक्त की गई वह क्षेत्रीयतावाद की भावना से प्रभावित होकर की गई। भाषा को लेकर भी उत्तर और दक्षिण भारत में गहरा मतभेद है। दक्षिण भारत के लोगों में इस धारणा के कारण क्षेत्रीयतावाद की भावना विकसित हो गई है। यही कारण है कि वहाँ के लोग क्षेत्रीय दलों को प्राथमिकता देने लगे है।

क्षेत्रीयतावाद के बढ़ने के कारण

1980 के बाद भारतीय राजनीति में जिस तरह से क्षेत्रीयतावाद की भावना बढ़ी है उससे भारतीय संघीय व्यवस्था के सामने एक गम्भीर चुनौती उत्पन्न हो गई है। महाराष्ट्र की घटना, पंजाब की स्थिति, असम की स्थिति, कश्मीर की स्थिति इसके ज्वलंत उदाहरण है। भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद के उदय और विकास के कई कारण रहे है जिसमें निम्नलिखित कारण अतिमहत्वपूर्ण हैं–

1. क्षेत्रीय आर्थिक विषमता ने भौगोलिक विविधता या त्रुटिपूर्ण नीतियों का परिणाम रही है पिछड़े एवं गरीब क्षेत्र के लोगों में क्षेत्रीय वंचन को उत्पन्न किया है।
2. विरोधी आर्थिक एवं राजनीतिक हितो के चलते जो आर्थिक एवं राजनीतिक विषमता के बोध उत्पन्न हुए है, वे भी लोगों में क्षेत्रवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया है।
3. मुख्यतः केन्द्र सरकार द्वारा विकास कार्यक्रमों में अपनाई गई नीतियों के कारण असमान विकास से प्रभावित लोगों में असंतोष उभरा है।
4. भारतीय राजनीति में कुछ राजनीतिक दलों या संगठनों या नेतृत्व के निहित स्वार्थ भी नृजातीय समूह को वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल करने के लिए लिये क्षेत्रवाद को बढ़ावा देते रही है।
5. विदेशों द्वारा अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए भी क्षेत्रवाद को उद्वेलित किया जाता है। (उत्तर–पूर्व के राज्यों में)।
6. वैश्वीकरण के कारण उत्पन्न पहचान के संघट ने भी विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को अपनी नृजातीय विशेषताओं के आधार पर संगठित होने के लिए उत्प्रेरित किया।
7. इसके अलावा अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी आदि तत्व भी उपरोक्त तत्वों के साथ जुड़कर भारत में क्षेत्रवाद को जन्म देने में सहायक रहें।
8. भारतीय राजनीति में कुछ राजनीतिक दलों या संगठनों या नेतृत्व के निहित स्वार्थ भी नृजातीय समूह को वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल करने के लिए क्षेत्रवाद को बढ़ावा देते रहे हैं। (महाराष्ट्र)।

क्षेत्रीयतावाद के दुष्परिणाम

1. विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच संघर्ष एवं तनाव (असम एवं गैर–असमियों के बीच झारखण्डी एवं दीकुओं के बीच) से जहाँ एक ओर कानून एवं व्यवस्था की समस्या उत्पन्न होती है वहीं संविधान द्वारा प्रदत्त नागरिक स्वतंत्रता का भी हनन होता है।
2. राज्य तथा केन्द्र सरकार के बीच तनाव बढ़ जाता है क्योंकि जहाँ राज्य सरकार क्षेत्रीय हितों से निर्देशित होती है वहीं केन्द्र सरकार को व्यापक राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखना पड़ता है।
3. क्षेत्रीयतावाद राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में बांधा पहुंचाता है। यह क्षेत्रीय मुद्दो को उभारकर वहाँ के लोगों को राष्ट्रीय मुद्दो के प्रति उदासीन बना देता है।
4. क्षेत्रीयता का एक दुष्परिणाम यह होता है कि इसके फलस्वरूप अलग–अलग क्षेत्र में कुछ इस प्रकार के नेतृत्व व संगठनों का विकास हो जाता है। जो कि जनता की भावनाओं को उभारकर अपने संकीर्ण स्वार्थों की पूर्ति करना चाहते है। देश के अनेक

क्षेत्रों जैसे– महाराष्ट्र, कश्मीर, पूर्वोत्तर भारत के कुछ राज्यों में स्थानीय नेतागण अपनी स्वार्थपूर्ति में लगें है।

5. भाषा की समस्या का अधिक साहित्य होना।
6. संकीर्ण क्षेत्रीयता राष्ट्रीय एकता के लिए एक चुनौती बन जाती है। क्षेत्रीयता के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों के बीच जो तनाव और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, वह राष्ट्रीय एकता की समस्त धारणाओं और भावनाओं पर तुषारापात करती है।

क्षेत्रीयतावाद के रोकने के सुझाव

क्षेत्रीयतावाद भारत जैसे संघीय व्यवस्था वाले देशों के लिए एक गम्भीर समस्या है समय रहते हुए इस समस्या का सही निदान करना आवश्यक है। क्षेत्रीयतावाद को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

1. केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों की नीतियाँ इस प्रकार की होनी चाहिए कि सभी क्षेत्रों का सन्तुलित आर्थिक विकास सम्भव हो सकें जिससे कि विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक तनाव कम से कम हो।
2. सभी क्षेत्र के लोगों को समान आर्थिक सुविधाएँ प्रदान की जाएं जिससे कि अनावश्यक प्रतिस्पर्द्धा की भावना न पनप सकें।
3. चुनाव आयोग को राजनीतिक दलों की गतिविधियों पर चुनाव के बाद भी ध्यान रखना चाहिए जो राजनीतिक दल चाहे वह राष्ट्रीय स्तर का हो या क्षेत्रीय स्तर का जाति धर्म, क्षेत्र एवं भाषा के आधार पर समाज को बांटने की कोशिश करते हों ऐसे राजनीतिक दलों पर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए।
4. केन्द्रीय मंत्रीमण्डल एवं राज्य मंत्रीमण्डल में सभी क्षेत्रों का उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जिससे कि क्षेत्रीय पक्षपातपूर्ण नीतियों का खण्डन हो सके तथा सरकार के गठन में सभी क्षेत्रों को उचित भागीदारी प्राप्त हो सके।
5. राज्य सभा में सभी राज्यों को समानता के आधार पर प्रतिनिधित्व दिए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए जैसा कि अमरीका के सीनेट में किया गया है।
6. राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़े हुए महत्वपूर्ण आदर्श एवं स्वाधीनता संग्राम से जुड़े महत्वपूर्ण घटनाओं की जानकारी विद्यालय या महाविद्यालय में पढ़ने वाले सभी छात्रों को देनी चाहिए।
7. भाषा सम्बन्धी विवादो का हल शीघ्र ही करना चाहिए। इस सम्बन्ध में सबसे उचित हल यह है कि सभी क्षेत्रीय भाषाओं को मान्यता प्रदान की जाए हिन्दी भाषा को किसी भी क्षेत्रीय समूह पर जबरदस्ती लादा न जाए अपितु इस भाषा का प्रचार व प्रसार इस ढंग से किया जाए कि विभिन्न क्षेत्रीय समूह स्वतः ही इसे सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार कर लें।

जिस प्रकार आज भारत में जाति राजनीति का मुख्य आधार बन गई है, उसी प्रकार क्षेत्रीयता भी राजनीति का मुख्य आधार है। इसका आधार इतना व्यापक और स्पष्ट है कि उत्तर और दक्षिण के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींची जा सकती हो। क्षेत्रीयतावाद का भारतीय राजनीतिकी शैली पर काफी प्रभाव पड़ा है क्षेत्रीयतावाद की भावना के कारण विघटनवादी एवं पृथकतावादी तत्वों को बढ़ावा मिला है। कुछ राजनीतिक विश्लेषकों का कहना है कि क्षेत्रीयतावाद के बढ़ने से भारत की संघीय व्यवस्था को कोई खतरा नहीं हैं। क्षेत्रीयतावाद के दो पहलू हैं वे हैं– (1) सकारात्मक पहलू (2) नकारात्मक पहलू। जहाँ तक इसके सकारात्मक पहलू का अर्थ है। इसका तात्पर्य क्षेत्र के विकास के लिए आन्दोलन करना या सरकार पर दबाव डालना। क्षेत्र विशेष की समस्याओं को उठाना अगर क्षेत्रीयतावाद का उदेश्य किसी क्षेत्र की समस्याओं और विकास पर बल देना है, तो ऐसी क्षेत्रीयतावाद से राष्ट्र के लिए कोई खतरा नहीं है, लेकिन क्षेत्रीयतावाद की आड़ में नफरत की भावना फैलाना, अलगाववादी को बढ़ावा देना अपने क्षेत्र को श्रेष्ठ घोषित करना, दूसरे क्षेत्र के रहने वाले लोगों को यहाँ से हटाना, क्षेत्र के आधार पर हिंसा की राजनीति करना, राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा करना, ये सभी तथ्य क्षेत्रीयतावाद के नकारात्मक पहलू है। क्षेत्रीयतावाद का यह नकारात्मक विचार राष्ट्र की प्रगति के लिए बाधक है, ऐसी क्षेत्रीय भावनाओं पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

निष्कर्ष

क्षेत्रीयतावाद से जुड़े उपर्युक्त तथ्यों के अध्ययन करने के बाद यह कहा जा सकता है कि भारत जैसे विशाल देश में क्षेत्रीयतावाद एक स्वाभाविक एवं तार्किक परिणाम है जिस प्रकार हम आज भारतीय राजनीति से जाति की भूमिका को समाप्त नहीं कर सकते उसी प्रकार हम क्षेत्रीयतावाद को भी न तो समाप्त कर सकते है और न ही उसे नकार सकते हैं। आवश्यकता इस बात की है हम उसके सकारात्मक पहलू को आगे बढ़ाएँ। क्षेत्रीयतावाद की प्रबल मांगे है सभी क्षेत्रों में समान गति से संतुलित विकास, क्षेत्रीय समस्याओं का समय पर समुचित निदान, क्षेत्र में रहने वाले लोगों को रोजगार की समान सुविधाएँ तथा क्षेत्र में उद्योग धन्धे कल–कारखानों की स्थापना जिससे क्षेत्र का विकास हो।

अन्त में कहा जा सकता है कि भारत जैसे विशाल विविधतापूर्ण और लोकतांत्रिक देश में क्षेत्रवाद और उपक्षेत्रवाद एक स्वाभाविक अवधारणा हैं।

संदर्भ सूची

1. तिवारी, जयकान्त– भारत का समाजशास्त्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ 2003
2. उच्चतर समाजशास्त्र विश्वकोश– हरिकृष्ण रावत पब्लिकेशन जयपुर
3. स्त्रोत–भारत में सामाजिक समस्याएं–क्रानिकल पब्लिकेशन (प्रा0) लि0 नई दिल्ली
4. समाजशास्त्र–एस0 एस0 पाण्डेय

5. समाजशास्त्र–गुप्ता राव शर्मा।
6. Ahmed, mti (1969) Secylarism and communalism economic and political weekly 6, 24-30 sepecial number
7. Bose, Nirmal Kumar (1967) Problem of National integration, Simla Institute for advance studies.